पाठ 2.1 : छत्तीसगढ़ी लोकगीत

डॉ. जीवन यदु

AYD3GP

*लोकसाहित्य के अध्येता और छत्तीसगढ़ के प्रमुख गीतकारों में एक विशेष नाम है डॉ. जीवन यदु का। उनका जन्म 1 फरवरी सन् 1947 ई. को खैरागढ़ में हुआ। आपकी प्रारंभिक शिक्षा भी यहीं हुई। 'लोकसाहित्य' में आपको डॉक्टरेट की उपाधि मिली, कविता आपकी मुख्य विधा है, पर विचारपरक लेख भी आपने बहुत लिखे हैं। **झील की मुक्ति के लिए** (काव्य संग्रह), **अनकहा है जो तुम्हारा** (गीत संग्रह), **छत्तीसगढ़ी कविता– संदर्भ एवं मूल्य** (आलोचना), **अइसनेच रात पहाही** (छत्तीसगढ़ी काव्य नाटिका) तथा **धान के कटोरा** (कविता संग्रह) आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं। नवसाक्षरों के लिए लिखी आपकी रचनाएँ भी प्रकाशित हुई हैं। वर्तमान में खैरागढ़ में ही निवासरत हैं। प्रस्तुत लेख उनके निबंध संग्रह **लोकस्वप्न में लिलिहंसा** से लिया गया है।*

लोकगीत 'लोक' की आंतरिकता का लयबद्ध और संगीतबद्ध अभिव्यक्ति है। 'लोक' ने अपनी जिस आंतरिकता के प्रकाशन के लिए विभिन्न माध्यम अपनाए, वह आंतरिकता युगीन व्यवस्थाओं के दबावों से कभी मुक्त नहीं रही और न कभी हो सकती है। अतः लोकगीत 'लोक' की सांस्कृतिक यात्रा का ऐसा साक्षी है, जो अपनी परंपरा में नवीनता का पक्षधर है। आज के लोकगीत–संगीत आदिम गीत–संगीत नहीं हैं, यद्यपि उन्होंने उनसे रस अवश्य ग्रहण किया होगा। मनुष्य के शिकारी जीवन से निकलकर पशुपालक व्यवस्था में प्रवेश करने के बाद ही लोकगीत और लोकसंगीत ने रूप ग्रहण किया था। फिर वे कृषि व्यवस्था और सामंती व्यवस्था को पार कर, आज इस जटिल युग में अपने परिवर्तित रूप में पहुँचे हैं। लोक की आंतरिकता पर उन सभी व्यवस्थाओं का असर रहा है। लोकगीतों में उन व्यवस्थाओं की स्मृतियाँ, अवशेषादि इसीलिए आज भी मिलते हैं। उन व्यवस्थाओं को लेकर लोकमानस पर जो प्रतिक्रियाएँ हुईं, उन्हीं से लोक साहित्य सृजित हुआ, जिसका एक बड़ा हिस्सा संगीतमय है।

चूँकि लोकमानस एक–सा होता है, अतः लोकगीतों के आंतरिक एवं बाह्य बुनावट को क्षेत्रान्तर अधिक प्रभावित नहीं करता। किसी विशिष्ट व्यवस्था में रहते हुए दुख और सुख की, असुरक्षा और संघर्ष की, जय और पराजय की अनुभूतियों का कलात्मक प्रकटीकरण लोक की सांस्कृतिक अनिवार्यता है। अतः यदि हम छत्तीसगढ़ क्षेत्र के लोकगीतों का अध्ययन करें, तो भी सारे क्षेत्रों के लोकगीतों की मूल प्रकृति, बनावट, बुनावट गुण–धर्म आदि स्पष्ट हो जाएँगे।

लोकगीत चूँकि सामाजिक व्यवस्थाओं और परंपराओं की देन हैं और उनकी रचना किसी विशिष्ट व्यक्ति द्वारा न होकर, उन सामान्य व्यक्तियों द्वारा होती है जिनका व्यक्तित्व सामाजिक व्यक्तित्व में पूरे तौर पर रूपान्तरित अथवा समाहित हो चुका है। लोकगीतकारों और लोकगायकों के माध्यम से एक पूरी जाति अपनी बात समवेत सुर में रखती है। यही कारण है कि लोकगीतों में व्यक्ति विशेष के बदले पूरी जाति का व्यक्तित्व परिलक्षित होता है।

लोकगीतों में ऐसे गीतों का मिलना असंभव नहीं, तो मुश्किल ज़रूर है, जो 'अकेले आदमी की पुकार' या 'अरण्यरोदन' बनकर लांछित हों। क्योंकि :

''डहर म रेंगय, हलाए डेरी हाथ।

अकेल्ला झन रेंगबे, बनाले संगी साथ।।''

(भावार्थ– बायाँ हाथ हिलाते हुए राह में अकेले मत चलो, किसी को अपना साथी बना लो।)

– जैसे विचारों को लेकर लोक जीवन चलता है।

दीपावली के अवसर पर छत्तीसगढ़ में 'सुआगीत' गाने की परंपरा है। चूँकि लोकगीतों में सुख और दुख दोनों का सामाजीकरण होता है, अतः सुआगीत की नारी पीड़ा समूची नारी जाति की पीड़ा बन जाती है।

''चंदा सुरुज तोर पैंया परत हँव,

तिरिया जनम झन देबे न रे सुआ न।

पहली गवन करि डेहरी बैठारे न रे सुआ न,

धनि छोड़ चले बनिझार।।

(भावार्थ– हे चाँद और सूरज, मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ अगले जन्म में मुझे स्त्री मत बनाना। गौना कराने के बाद मैं पहली बार अपने पति के घर आई हूँ, और मेरे पति है, कि मुझे यहाँ अकेली छोड़कर खुद काम पर चले गए हैं।)

''तुलसी के बिरवा जब झुरमुर होइ है,

रे सुआ न, मोर मयारू गए रन जूझ ।।''

यह और बात है कि सुआगीत की नारी–पीड़ा मध्य युगीन नारी–पीड़ा है, तब नारी होना अपने आप में पीड़ादायक बात मानी जाती थी। उन नारियों की करुणा लोकमानस में लगातार घुल रही है। इससे एक बात और स्पष्ट होती है, कि लोकगीतों में इतिहास छुपा होता है, उनके भावों में ही नहीं, उनके शब्दों में भी इतिहास की झलक होती है–

''पान खाय सुपारी खाय

सुपारी के दुइ फोरा।

रंग–महल में बइठो मालिक

राम–राम लौ मोरा। ''

'राउत नाचा' के इस दोहे में दो शब्द – 'रंगमहल' और 'मालिक' सामंती व्यवस्था की याद दिलाते हैं, जो लोकमानस में घुल–मिल गए हैं।

लोकगीतों के शब्द और धुन, दोनों में मस्ती होती है। लोकजीवन उस मस्ती का अमृत पीकर अपने दुख को भी भूल जाता है। शृंगार और प्रेम की खुली अभिव्यक्ति लोकजीवन की उसी मस्ती का परिणाम है।

''बटकी म बासी अउ चुटकी म नून,

मैं गावत हौं ददरिया, तैं कान दे के सुन।''

लोकजीवन 'नून और बासी' खाकर भी ददरिया की मस्ती में डूब सकता है, शृंगार का सृजन कर सकता है और प्रेम को शब्द दे सकता है।

''अमली के लकड़ी, काटे म कटही।

तोर मोर पिरीत हा मरे म छुटही।।''

पूर्व में कहा जा चुका है कि लोकगीत लोक की सांस्कृतिक यात्रा का साक्षी है। लोकसंस्कारों की पूरी छाप लोकगीतों पर होती है, उनमें न केवल स्थूल लोकसंस्कार (कर्मकांड) ही प्रदर्शित होते हैं, वरन ऐसे लोकसंस्कार भी चित्रित होते हैं जो लोकस्वभाव में घुस कर लोकचरित्र में शामिल हो चुके हैं। उदाहरण के तौर पर विवाह–संस्कार का यह गीत लिया जा सकता है–

''ददा तोर लानिथै हरदी–सुपारी वो,

दाई लानय तिला तेल।

कोन चढ़ाथय तोर मन भर हरदी वो,

कोन देवय अँचरा के छाँव।

फुफू चढ़ावै तोर तन भर हरदी वो,

दाई देवय अँचरा के छाँव।''

(भावार्थ– तुम्हारे पिता हल्दी–सुपारी लाते हैं और माँ तिल का तेल लाती है। कौन तुम्हें मन भर हल्दी चढ़ाएगा? कौन तुम्हें अपने आँचल की छाँव देगा? बुआ तुम्हारे तन पर हल्दी चढ़ाएगी और माँ अपने आँचल की छाँव देगी।)

इसी तरह इस गीत में सारे रिश्तेदारों को जगह दी जाती है। यदि हम इसमें गहरे उतरें तो लोकस्वभाव को देख और समझ पाएँगे। सहयोग लोक का स्वभाव है। विवाह जैसे कार्यों में सारे रिश्तेदारों का सहयोग होता है। उस सहयोग को लोकगीतकार सूक्ष्मता से रेखांकित करता है। ऐसे गीत आत्मीय वातावरण निर्मित करने में सक्षम होते हैं। इसी तरह एक विवाह गीत में रिश्तों के सर्वमान्य स्वभाव को रेखांकित किया गया है।

लोकगीत जनजीवन को पूरी बारीकी से खोलते हैं। यद्यपि वे अपनी ऊपरी परत से सामान्य लगते हैं, लेकिन उनमें लोकजीवन के संस्कार, व्यवहार और स्वभाव की गहराई होती है।

''देतो दाई, देतो दाई अस्सी वो रुपैया,

सुंदरी ला लातेव मैं बिहाय।

''तोर बर लानहूँ दाई रँधनी–परोसनी,

मोर बर घर के सिंगार।''

उपरांकित नहडोरी गीत में नायक अपनी माँ से निवेदन करता है कि हे माँ! मुझे अस्सी रुपए दे दो, जिससे मैं सुंदरी को ब्याह कर, आपके लिए राँधने–परोसने वाली और अपने घर का शृंगार ला सकूँ। इन चार पंक्तियों में कई बातें स्पष्ट होती हैं। पहले तो यह कि लोकजीवन में विवाह ज्यादा खर्चीला नहीं होता। नायक अस्सी रुपए में सुंदरी नायिका से विवाह कर सकता है। यह तब की कल्पना हो सकती है, जब लोकजीवन में अस्सी रुपए का कोई बड़ा अर्थ रहा होगा। दूसरी बात यह कि उस विवाह से, नायक अपने लिए सिर्फ पत्नी ही नहीं लाएगा, अपनी माँ के लिए राँधने–परोसनेवाली भी लाएगा। वह 'राँधने–परोसनेवाली' उसकी पत्नी ही नहीं, उस घर का शृंगार भी होगी। इस तरह इससे छत्तीसगढ़ के लोकजीवन की आर्थिक स्थिति, लोकजीवन का स्वप्न, लोक जीवन की भीतरी आत्मीय दुनिया आदि एक साथ स्पष्ट होते हैं।

लोकगीत सहज संप्रेष्य होते हैं। इसके कुछ कारण हैं– पहला, लोकगीत किसी एक व्यक्ति की अभिव्यक्ति नहीं हैं। दूसरा, लोकगीत समूह की मानसिकता पर आधारित होते हैं। तीसरा, लोकगीत विचारों के वाहक ही नहीं, रंजन का साधन भी हैं और चौथा, लोकजीवन की सहजता लोकगीतों को असहज नहीं होने देती। 'जँवारा–गीत' की निम्नांकित पंक्तियाँ इसकी पुष्टि करती हैं–

''माता फूल गजरा गूँथव हो मालिन के

देहरी, हो फूल गजरा।

काहेन फूल के गजरा, काहेन फूल के हार।

काहेन फूल के तोर माथ मटुकिया, सोलहों सिंगार।

चंपा फूल के गजरा चमेली फूल के हार।

चमेली फूल के माथ मटुकिया, सोलहों सिंगार।''

इस लोकगीत में अध्यात्म या भक्ति के स्थान पर लोकजीवन में देवी माँ की कल्पना भी सादगीपूर्ण है– अपनी खुद की माँ की तरह। सोने–चाँदी के गहनों के स्थान पर फूलों के गहने हैं, जो लोक को सुलभ है, वही लोक का सत्य है। लोक की सादगी ही लोक का ऐश्वर्य है। एक व्यक्ति की अभिव्यक्ति में ऐश्वर्य का रूप इससे अलग होता है। वह अभिव्यक्ति सहज संप्रेष्य नहीं होती है। समूह की मानसिकता पर आधारित होने के कारण

लोकगीतों में जीवन के व्यवहारों का सामान्यीकरण हो जाता है। अतः हर आदमी के हृदय को गीत के लय और शब्द छू सकें।

लोकगीतों में बहुत से गीत ऐसे मिलेंगे जिनमें चित्रों की रचना हुई है। कथात्मक गीतों में यह बात निश्चित रूप से होती है। लोकगीतकार चित्रों की रचना इस तरह करते हैं कि श्रोताओं को वह घटना अपनी आँखों के सामने घटती–सी प्रतीत होती है। 'पंडवानी' की इन पंक्तियों को बतौर उदाहरण रख सकते हैं–

''रानी के नेवता कीचक पावे जी,

साजे सिंगार राजा चलत हावै न,

माथे म मुकुट राजा बाँधत हावै जी,

काने म कुंडल राजा पहिरत हावै जी,

गले म गजमुक्ता के हार सोहै जी,

इन पंक्तियों में विराट राजा महाबाहु के साले और राज्य के सेनापति कीचक के उस शृंगार का चित्रात्मक वर्णन है, जिसे उसने सैरंध्री (द्रौपदी) के कक्ष में जाते समय धारण किया था। इसी तरह 'पंडवानी' के सेना– प्रयाण के दृश्य को लोक गीतकार ने चित्र और ध्वनि के माध्यम से उभारा है।

लुहँगी, साँप सँलगनी,

हाथी हदबद, गदहा गदबद,

घोड़ा सरपट, पैदल रटपट,

सेना करिन पयान।'

चूँकि लोकप्रकृति 'मुक्ति' की हामीदार है, मोक्ष की नहीं। अतः लोकसाहित्य में आए चमत्कारी देवता–लोक को भौतिक सुविधा प्रदान करने वाले लगते हैं। गोपालक जातियाँ 'बाँस गीत' गाती हैं–

''पहली धरती अउ पिरथी, दूसर बंदव अहिरान

तीसर बंदव गाय– भँइस ला, काटय चोला के अपराध।

चौथे बंदव नोई कसेली, राउत के करे प्रतिपाल।

पँचहे बंदव अहिर पिलोना, जनमें हे गोपी गुवाल।''

(भावार्थ– पहले धरती को प्रणाम करता हूँ, दूसरा प्रणाम सभी अहीरों को, तीसरा प्रणाम गाय–भैंसों को करता हूँ जिनकी सेवा से पाप कट जाते हैं, चौथा प्रणाम नोई और कसेली को जिनसे मेरी आजीविका चलती है, पाँचवें यादव कुल को प्रणाम जिसमें श्रीकृष्ण और गोपी ग्वालों का जन्म हुआ था।)

'मतराही' जाने से पहले राउत अपने घर का भार अपने गृह देवता पर इस तरह डालता है, जैसे वे उसके घर के कोई बुजुर्ग हों–

'' बोकरा लेबे के भेड़ा रे, या लेबे रकत के धार,

मैं तो जावत हौं मतराही, तोला लगे हे घर के भार।''

(भावार्थ– हे गृह देवता! तुम चढ़ावे के रूप में चाहे तो बकरा ले लो या चाहो भेड़ ले लो या फिर मेरे रक्त की धार ही ले लो। चूँकि मैं मतराही जा रहा हूँ इसलिए घर की सारी जिम्मेदारी अब तुम्हारी है।)

लोकगीतकारों ने संसार की वास्तविकता को स्वीकार करते हुए इसी तरह जगत को सत्य माना है। ''हरदाही– गीत' की ये पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

''खेल ले गोंदा जियत भर ले।

ये चोला नइ आवय घेरी–बेरी।''

लोकगीतों में विरोध का स्वर व्यंग्य में फूटता है। जमींदारी प्रथा से पीड़ित व्यक्ति अपने विरोध को प्रकट करने का मौका ढूँढ ही लेता है। 'मँड़ई' के समय राउत अपने दोहे में 'ठाकुर' को भी नहीं बख्शता–

''गाय बइला के सींग म, मैं हा देखँव माटी।

ठाकुर पहिरे सोना चाँदी, ठकुराइन पहिरे घाँटी।''

इस तरह एक दोहे का उदाहरण और लिया जा सकता है–

''जइसे मालिक लिये–दिये, तइसे देबो असीस।''

इस पंक्ति में 'लिये–दिये' और 'तइसे देबो' शब्द का एक विशिष्ट संबंध बनाकर वे व्यंग्यार्थ प्रकट करते हैं। यदि ठीक–ठाक लिया–दिया गया होगा, तभी हृदय से आशीर्वाद मिल सकता है, वरना नहीं।

लोकसाहित्य अपने परिवर्तन में ही विकास पाता है। वह इतिहास का हम–कदम होता है। लोकगीतकार जब अपने युगबोध को स्वर देता है तब–

''पीपर के पाना हलर– हइया।

अँगरेजवा के राज कलर– कइया।''

या

''नरवा के तिर हा दिखत हे हरियर।

टोपी वाला नइ दिखय, बदे हौं नरियर।''

(भावार्थ– नदी के किनारे हरे–भरे हो गए हैं, मुझे टोपी वाला नहीं दिख रहा है इसके लिए मैंने नारियल के साथ मन्नत माँगी है।)

जैसी रचनाएँ लोकजीवन को आंदोलित करने लगती हैं। नाचा–गम्मतों में लोकगायक ज्वलंत समस्याओं को लेकर जीवंत अभिव्यक्ति देते हैं। इस तरह छत्तीसगढ़ी लोकगीतों के माध्यम से हम यहाँ के समग्र लोकजीवन और लोकसंस्कृति को समझ सकते हैं।

टीप : कोष्टक में दिए गए भावार्थ रचनाकर के नहीं है। इसे विद्यार्थियों को समझने हेतु लिखा गया है।

शब्दार्थ

साक्षी – गवाह; **लोकजन** – आम जनता; **बाह्य** – बाहरी; **क्षेत्रांतर** – क्षेत्रों के बीच अंतर; **रूपांतरित** – परिवर्तित; **परिलक्षित** – दिखाई; **लांछित** – कलंकित; **डहर** – रास्ता; **डेरी** – बायाँ; **झन रेंगबे** – मत चलना; **झुरमुर** – मुरझाना; **मयारू** – प्रिय; **नून** – नमक; **दुइ फोरा** – फोड़कर दो भाग किया हुआ; **फुफू** – बुआ; **रँधनी** – पकाने की (का); **परोसनी** – परोसने की; **मटुकिया** – मुकुट; **घाँटी** – लोहे की बड़ी घंटी जो पशुओं के गले में पहनाई जाती है; **असीस** – आशीष; **नहडोरी** – विवाह के समय वर या वधू के स्नान की प्रक्रिया; कलर–कइया – झगड़ा कलह; **नोई** – गाय बाँधने की रस्सी; **कसेली** – दूध दुहने का बर्तन; **मतराही** – यादव जाति के द्वारा भाईदूज के दिन मनाया जाने वाला पर्व (मातर–पर्व)।

अभ्यास

पाठ से

1. क्षेत्रीय लोकगीतों में पाई जाने वाली समानताएँ क्या–क्या हो सकती हैं?
2. सुआगीत की विशेषताएँ लिखिए।
3. राउत नाचा के दोहों में से उदाहरणार्थ कोई दोहा लिखिए जिससे सामंती व्यवस्था की याद आती हो।
4. 'मतराही' क्या है?
5. छत्तीसगढ़ के भक्ति संबंधी लोकगीत कौन–कौन से हैं?
6. लोकगीत सहज संप्रेष्य क्यों होते हैं?
7. पाठ में दिए गए कौन–कौन से लोकगीत पर्वों से संबंधित हैं?

पाठ से आगे

1. आपके आसपास ऐसे कौन–कौन से लोकगीत हैं जो–

   (क) केवल पुरुषों के द्वारा गाए जाते हैं?

   (ख) केवल महिलाओं के द्वारा गाए जाते हैं?

   (ग) पुरुषों और महिलाओं के द्वारा सम्मिलित रूप से गाए जाते हैं?

2. जैसे होली के अवसर पर 'फाग गीत' गाए जाते हैं, वैसे ही अन्य पर्वों पर कौन–कौन से लोकगीत गाए जाते हैं?

3. विवाहगीतों में हास्य–व्यंग्य कहाँ देखने को मिलता है? उदाहरण सहित लिखिए।

4. सुआगीतों का संकलन कर उनके विषय को लिखिए।

5. सुआ, पंथी, कर्मा और राउत नाचा में गीत के साथ किए जा रहे नृत्य की पोशाक और प्रयुक्त अन्य सामग्रियों की सूची बनाइए।

6. लोककथाओं के आधार पर रचे गए लोकगीतों के नाम लिखिए।

7. पंडवानी में गाई गई कथा के किसी एक प्रसंग को अपने शब्दों में लिखिए।

भाषा के बारे में

1. सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, वास्तविक आदि शब्द पाठ में आए हैं। इनमें मूल शब्दों में 'इक' प्रत्यय लगा है। इनके मूल शब्दों को पहचानकर लिखिए तथा ऐसे ही तीन उदाहरण और लिखिए।

2. 'अर्थ' तथा 'रस' ऐसे शब्द हैं जिनके एक से अधिक अर्थ हैं। आप ऐसे ही और पाँच शब्द खोजकर लिखिए।

3. पाठ से निम्नांकित शब्द लिए गए हैं। इन्हें स्त्रीलिंग और पुल्लिंग शब्दों के रूप में पहचानकर अलग कीजिए।

   प्रकाशन, व्यवस्था, माध्यम, परंपरा, नवीनता, संगीत, रस, लोकगीत, स्मृतियाँ, प्रतिक्रियाएँ।

पुल्लिंग शब्द	स्त्रीलिंग शब्द
उदाहरण– प्रकाशन	परंपरा

4. निम्नांकित शब्दों का उपयोग करते हुए एक कहानी लिखिए–

   शिकारी, किसान, चरवाहा, जंगल, बाँसुरी, संगीत, वन्य–पशु, चिड़िया, शेर, चरवाहा, राजा, भय, पुरस्कार, प्रसन्नता, दरबार।

5. 'लोक' शब्द में गीत जोड़कर बना लोकगीत। आप 'लोक' शब्द के साथ अन्य शब्द जोड़कर कितने शब्द बना सकते हैं? लिखिए।

6. निम्नांकित शब्द एक थीम की तरह दिए गए हैं। आपको इस थीम से संबंधित और शब्द लिखने हैं। यह खेल नीचे दिए गए उदाहरण की तरह होगा, याद रहे आपके शब्द उस 'थीम' के अंतर्गत ही होने चाहिए।

उदाहरण–

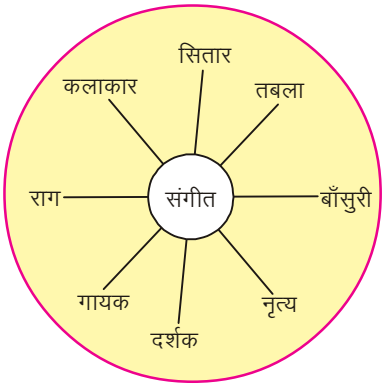

(क) वर्षा (ख) विद्यालय

योग्यता विस्तार

1. छत्तीसगढ़ी विवाह गीतों का संकलन कर एक फाइल बनाइए।
2. लोकगीतों के साथ प्रस्तुत किए जाने वाले नृत्यों के चित्र संकलित कर उनकी फाइल बनाइए।
3. यहाँ 'जसगीत' की कुछ पंक्तियाँ दी जा रही हैं, इन्हें पढ़िए और समूह में गाइए।

माँ आशीष देबे हो,
तोरे सरन मा आयेन माँ, आशीष देबे हो
हम लइका हन हमला तैं हा
कभु नहीं बिसराबे वो
माँ आशीष देबे हो,
तोरे सरन मा आयेन माँ आशीष देबे हो।
तहीं भवानी तहीं शारदा तहीं हवस जगदंबा
तोर प्रतापे तोड़िन वो बेंदरा–भालु मन गढ़ लंका
माँ आशीष देबे हो
तोरे सरन मा आयेन माँ आशीष देबे हो।

BBA41J